गालो और हिंदी लोक-सुभाषितों में नीति और उपदेशात्मक चेतना

रबोम बेलो

कभी-कभी सीधी और सपाट भाषा से अधिक टेढ़े कथन लोगों को ज़्यादा समझ आते हैं। जैसे, "सीधी ऊँगली से घी नहीं निकलता, तो ऊँगली टेढ़ी करनी पड़ती है।" लोकोक्तियाँ, मुहावरे, पहेलियों से भाषा को केवल निखारा नहीं जाता, अपितु इससे समाज में रहने वाले व्यक्ति को उपदेश और नीति भी दी जाती है। गालो और हिंदी भाषा में भी अनेक ऐसे लोक-सुभाषित हैं जो नीति और उपदेशात्मक चेतना को लेकर पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आ रहे हैं। डॉ. कृष्ण उपाध्याय कहते हैं "ग्रामीण जनता अपने दैनिक व्यवहार जगत में अनेक लोकोक्तियों, मुहावरों, पहेलियों, सूक्तियों आदि का प्रयोग करती है। इससे उसकी वचन-चातुरी का पता चलता है। लोकोतियों के प्रयोग से किसी उक्ति या कथन में शक्ति आ जाती है और श्रोताओं पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ता है। मुहावरों के द्वारा भाषा में चुस्ती आती है और उसका स्वरूप सुंदर बन जाता है। बालकगण समुदाय में बैठकर एक दूसरे से पहेलियों को पूछकर बुद्धि की परीक्षा करते हैं।"[1] लोक-सुभाषित का महत्त्व को स्पष्ट करते हुए डॉ. राजेश्वर कहते हैं कि "किसी भी भाषा में सुंदरता लाने के लिए जिस प्रकार अलंकारों का प्रयोग किया जाता है, उसी प्रकार लोकोक्तियाँ और मुहावरों का प्रयोग अपेक्षित है। लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग इसलिए भी अपेक्षित है, क्योंकि इनके प्रयोग से भाषा में सजीवता, सरसता और स्वाभाविकता का समावेश हो जाता है। इसके प्रयोग से भाषा के भाव एवं अर्थ का स्पष्टीकरण तो हो जाता ही है, साथ ही हृदय में उठे हुए भावों का भी पूर्ण बोध हो जाता है।"[2]

गालो जनजाति अरुणाचल प्रदेश की प्रमुख जनजातियों में से एक है। गालो जनजाति अरुणाचल प्रदेश के जिले वेस्ट सिआंग, ईस्ट सिआंग, अपर सुबनसिरी, लोअर सिआंग, लअप्पारादा आदि क्षेत्रों में निवास करती है। गालो जनजाति की भाषा सीखने और बोलने में सरल मानी जाती है। गालो आबोतानी के वंशज हैं। गालो जनजाति का प्रमुख त्योहार मोपिन है। मोपिन अच्छी फसल और समृद्धि के लिए माँ दोन्यी (सूर्य) और पिता पोलो (चंद्रमा) की उपासना करते हैं। गालो जनजाति में व्यक्ति का नाम उसके पिता के नाम के अंतिम दो अक्षरों से रखा जाता है, जैसे तानी के बेटे नीतुम। इसके कारण गालो जनजाति को अपने वंश की शुरुआत जानने में कोई समस्या नहीं होती। आज की पीढ़ी को भी अपने पूर्वजों के नाम याद रखने में समस्या नहीं होती है। गालो समाज में लोक-सुभाषित प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है और उनका प्रयोग किया जाता है। पर्व-त्योहारों, अनुष्ठानों और विभिन्न उत्सवों में लोक-सुभाषितों का प्रयोग किया जाता है।

गालो और हिंदी लोक-सुभाषितों में अंतरसंबंध

गालो भाषा और हिंदी भाषा दोनों ही एक भाषा परिवार के नहीं हैं। लिपि, प्रयोग, उच्चारण, क्षेत्र आदि दृष्टि से दोनों में भिन्नताएँ हैं। फिर भी भावनात्मक रूप से दोनों के बीच संबंध है। हिंदी और गालो लोक-सुभाषितों में नीति और उपदेशात्मक अंतरसंबंध को इनके लोक-सुभाषितों के भाव में उपलब्ध कहावतों, लोकोक्तियों, मुहावरों के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है। जैसे लोक-सुभाषितों के आधार पर यह इस प्रकार है –

'कोजो अनामअ रोजुमला, कोरो अनामे रोडांमला।'

शब्दार्थः कोजो- बाद में, अनामअ- कहना, रोजुमला-व्यर्थ में बीत जाना, कोरो-बाद में, रोङांमला-समय बीत जाना।

इस लोकोक्ति का निहितार्थ यह है कि समय का मानवीय जीवन में अत्यंत महत्त्व है; अतः समय को व्यर्थ व्यय नहीं करना चाहिए, अपितु समयोचित कार्य-संपादन पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए तथा किसी भी कार्य को स्थगित नहीं करना चाहिए।

'कल करे सो आज कर, आज करे सो अब।' अर्थात इस लोकोक्ति में भी समय के महत्त्व को बताते हुए यह उपदेश दिया है कि मनुष्य को वक्त पर कार्य कर लेना चाहिए।

उपर्युक्त दोनों लोक-सुभाषितों में अंतरसंबंध यह है कि दोनों में एक ही भाव है: जो कार्य है उसे कल के लिए न छोड़कर आज ही कर लेना चाहिए। समय मनुष्य के लिए कितना महत्त्वपूर्ण है! समय को यूँ ही बरबाद नहीं करना चाहिए। वक्त के साथ-साथ मनुष्य को अपना काम भी पूरा कर लेना चाहिए। किसी भी कार्य को कल के लिए नहीं छोड़ना चाहिए।

'ञिबो अ ञितो ब इमा, मेरे अ कोदे ब इमा।'

शब्दार्थः ञिबो- पराया या मेहमान या बाहरी व्यक्ति, अ-जो, ञितो- अपना या परिवार, ब-में, इमा-नहीं होता, मेरे-कोयला, कोदे-मिट्टी।

भावार्थः पराया कभी अपना नहीं हो सकता, जैसे कोयला को मिट्टी में मिलाने पर भी वह मिट्टी नहीं बनता, उसी प्रकार पराया को अपना परिवार का हिस्सा कहने से परिवार नहीं बनता।

'अपना अपना है, पराया पराया है।' अर्थात् खून का रिश्ता अंत तक अपना ही होता है; परायों को अपना कहने से कभी अपना नहीं बनते। इन दोनों लोक-सुभाषितों का भाव यह है कि पराया कभी अपना नहीं होता और अपना अपना ही रहता है।

'किबो दोरकेन अ योरलो पिपोमा, रोकपो दोरकेन अ दोलु कोगुमा।'

शब्दार्थ: किबो- कुत्ता, दोरकेन- एक, अ- जो, योरलो-पहाड़ की चोटी, पिपो-भोंकना, मा-नहीं, रोकपो-मुर्गा, दोलु-गाँव, कोगु-जगाना या बांग से जगाना, मा-नहीं।

भावार्थः जिस प्रकार एक कुत्ते से शिकार नहीं किया जा सकता और एक मुर्गे की बाँग से पूरा गाँव नहीं जगाया जा सकता, उसी प्रकार एक व्यक्ति से समाज में सुधार नहीं लाया जा सकता। जिस प्रकार शिकार के लिए अनेक कुत्तों की आवश्यकता होती है और पूरे गाँव को जगाने के लिए एक मुर्गे की बाँग पर्याप्त नहीं होती, उसी प्रकार समाज की बुराइयों के विरुद्ध एक व्यक्ति का विरोध उन बुराइयों को मिटा नहीं सकता।

'अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता' अर्थात् अकेला व्यक्ति बिना दूसरों के सहयोग से बड़ा काम नहीं कर सकता, जैसे अकेला चना से भाड़ नहीं फोड़ा जा सकता।

दोनों लोक-सुभाषितों में नैतिक उपदेश यह है कि संगठन में शक्ति होती है। ऐसे लोक-सुभाषितों के माध्यम से समाज की बुराइयों के विरुद्ध विद्रोह के लिए एक-दूसरे में यह उत्साह जगाते हैं कि संगठन से बुराई के खिलाफ़ लड़ा जा सकता है। इससे समाज में लोगों की एकता बनी रह सकती है। सामाजिक बुराइयों को मिटाने के लिए संगठन की आवश्यकता है।

'सोनह रगर नम रबु तिअरदाम लामा, ञामनअ मियअ नम आपुक पाकदाम लामा।'

शब्दार्थः सोनह- मादा मिथुन, रगर-टेढ़ा, नम-को, रबु-सिंग, तिअरदाम-मोड़ना या सीधी करना, लामा- नहीं कर पाना, ञामनअ-बहु, मियअ-मन से बुरा, आपुक-दिल या मन, पाकदाम-सही से बांधना या बदलना।

भावार्थः जिस प्रकार मिथुन या गाय की सींग कभी सीधी नहीं हो सकती, उसी प्रकार कुचरित्र स्त्री या बहू के मन को बदला नहीं जा सकता। जिस प्रकार टेढ़े सींग वाले मिथुन या गाय की सींग कभी सीधी नहीं हो सकती, उसी प्रकार बुरी व्यक्ति का मन भी अच्छा नहीं किया जा सकता। जितना भी प्रयास करने पर भी बुरे लोगों के मन को नहीं बदला जा सकता, क्योंकि उनका स्वभाव ही ऐसा होता है, जैसे टेढ़े सींग को सीधा नहीं मोड़ा जा सकता।

'कुत्ते की दुम बारह वर्ष नली में रखो तो भी टेढ़ी ही रहती है।' अर्थात् जिस प्रकार कुत्ते की दुम बारह वर्ष नली में रखने पर भी कभी सीधी नहीं होती, उसी प्रकार बुरे व्यक्ति का मन भी कभी नहीं बदलता।

दोनों उक्तियों में अपरिवर्तित बुरे मनुष्य के स्वभाव को बताया गया है।

'निक-निक न तातिक गो,
नाक-नाक न कोजग गो,
यू-यू न ताकु गो।'

शब्दार्थ: निक-निक– धीरे या जल्दबाजी न करना, तातिक–मेंदक, नाक-नाक– बहुत ही धीरे से या सावधानीपूर्वक, कोजग-जंगली चूहा, यू-यू- धीरे या धीमी गति या सावधानीपूर्वक अपने मन में लक्ष्य के प्रति धीरज धरते हुए, ताकु- जंगली पक्षी।

भावार्थ: यह लोक-सुभाषित अंग्रेजी के 'स्लो एंड स्टेडी विन्स द रेस' (Slow and steady wins the race) के समानार्थी है। जिस प्रकार एक शिकारी को शिकार करते समय सावधानी बरतनी पड़ती है, उसी प्रकार मनुष्य को अपने लक्ष्य के प्रति सावधानी बरतनी चाहिए। शिकारी जल्दबाजी में शिकार करे तो उसे कम मिलेगा, और अगर वह शिकार करते समय लापरवाही बरते तो उसे कुछ भी नहीं मिलेगा; परंतु उसे बेहतर फल की प्राप्ति तब होगी जब वह अत्यंत सतर्कता से शिकार करेगा।

'फूंक-फूंक कर कदम रखना'

भावार्थ: अत्यंत सावधानी बरतना। दोनों उक्तियों में मनुष्य को अपना कार्य करते समय सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे करना चाहिए। इससे बेहतर फल की प्राप्ति होती है।

अतः हम यह कह सकते हैं कि गालो और हिंदी लोक-सुभाषितों में भावार्थ रूप से कई समानताएं हैं। हिंदी और गालो सुभाषितों में विभिन्न उपदेशात्मक लोक-सुभाषित हैं- समय के महत्त्व पर उपदेश, परिवार और खून के रिश्ते का महत्त्व, संगठन में शक्ति का उपदेश, लक्ष्य के प्रति सावधानी और धैर्य रखने की नीतिपरक सीख आदि उपदेशात्मक चेतना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. उपाध्याय, कृष्ण. (2011) *लोक साहित्य की भूमिका*. नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन. पृ. सं. 150
2. चतुर्वेदी, राजेश्वर. (2021). *लोक साहित्य*. आगरा: हरीश प्रकाशन मंदिर. पृ. सं. 201

*(**लेखकीय परिचय :** डॉ. रबोम बेलो राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, अरुणाचल प्रदेश के हिंदी विभाग से पीएच.डी. कर चुकी हैं। वर्तमान में आप इंदिरा गाँधी शासकीय महाविद्यालय, तेजू, अरुणाचल प्रदेश के हिंदी विभाग में अतिथि सहायक प्रोफेसर हैं। मोबा: 8416053354, ई-मेल : omeote27@gmail.com)*